IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

मुक्तिबोध के काव्य में अभिव्यक्त सामाजिक एवं राजनीतिक द्वंद्व

आकाश भारती

शोधार्थी

हरियाणा केन्द्रीय विश्वविद्यालय, महेंद्रगढ़

गजानन माधव मुक्तिबोध हिन्दी कविता के सशक्त एवं सक्षम हस्ताक्षर के रूप में हमारे सम्मुख आते हैं । प्रयोगवाद से लेकर नई कविता तक निरंतर भोगे हुए यथार्थ को अपनी कविता के माध्यम से वास्तविक रूप में प्रस्तुत करने वाले कवियों में से मुक्तिबोध का नाम सर्वप्रथम आता है । वे मूलतः जनवादी कवि हैं और काव्य दृष्टि से ही उनका महत्व सबसे अधिक है, मुक्तिबोध की केंद्रीय संवेदना मानवीय थी जिसकी अनुगूंज उनकी कहानियों में तो है ही, कविताओं में भी है । उनकी समस्त रचनाओं में ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति मानव और उससे ही जुडी श्रापनुमा समस्याएं हैं, उस श्राप से विमोचन का ख्याल और चिंता बार-बार आसमान में बिजली की तरह दिखाई देती है ।

मुक्तिबोध को कवि मुक्तिबोध मानते हुए मूल्यांकन किया जाए तो, 'नामवर सिंह' का कथन "निराला और मुक्तिबोध ने अपनी बलि देकर कविता को बचा लिया ।"[1] पूर्णतः सटीक बैठता है । 'अँधेरे में' जैसे महाकाव्यनुमा क्लासिक, 'ब्रह्मराक्षस', 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', 'भूल गलती', 'पता नहीं, मुझे कदम-कदम पर', 'मेरे लोग', 'मैं तुम लोग से दूर हूँ', 'चकमक चिनगारियाँ', 'औरंगउटांग', 'चम्बल की घाटी', मुक्तिबोध की कालजयी उपलब्धियां हैं, जो उन्हें सशक्त कवि के रूप में रेखांकित करने के लिए पर्याप्त है ।

मुक्तिबोध की कविता समय सापेक्ष होते हुए भी कभी इतिहासनुमा तो कभी भविष्यनुमा और कभी-कभी अतीत में डूबती उतरती सी और कभी समय के झंझावातों से उलझती हुई सी तो कभी फैंटेसी में उड़ान भरती हुई लगती हैं । उनकी कविताएं पढ़ने और समझने के लिए धैर्य की दरकार रहती है । अपने काव्य में समाज के यथार्थ को उभारने के

लिए मुक्तिबोध अपने काव्य में व्यंग्य शैली के माध्यम से समाज में व्याप्त विसंगतियों और विडंबनाओं पर चोट करते हैं। इन्ही विसंगतियों एवं विडंबनाओं की चुटकी लेते हुए उन्हें समाज के सामने लाने का काम मुक्तिबोध के काव्य में हुआ है। मुक्तिबोध की कविताओं में सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक विसंगतियों पर प्रहार हुआ है। उनकी 'ब्रह्मराक्षस' कविता में निष्क्रिय बौद्धिकता पर जो गहरा प्रहार हुआ है, वह समाज के बुद्धिजीवियों पर व्यंग्य के माध्यम से अपना प्रभाव छोड़ता है। कविता में मुक्तिबोध कहते हैं- "तिरछी गिरी रवि रश्मि के उड़ते हुए परमाणु / जब तल तक पहुंचते है कभी / तब ब्रह्मरक्षस समझता है, सूर्य ने / झुककर 'नमस्ते' कर दिया।"[2] वे इसी व्यंग्य शैली के माध्यम से समकालीन समाज के असली रूप की यथार्थ अभिव्यक्ति दिखाते हैं। 'दिमागी गुहाअंधकार का ओरांग उटांग' कविता में वो लिखते हैं- 'सत्य के बहाने / स्वयं को चाहते है प्रस्थापित करना / अहं को तथ्य के बहाने"[3] कविता में स्वयं को स्थापति करने के लिए जिस सत्य का बहाना लेने की बात मुक्तिबोध कर रहे हैं। वह सीधे समाज के बुद्धिजीवी के अहं को स्थापित करने की नीति और उसके पीछे छिपी मनसा को भांप गए हैं। वे समझ गए हैं कि किस प्रकार से समाज का एक वर्ग तथ्य को अपने हथियार की तरह प्रयोग में लेकर अपना निज हित करने में लगा है। मुक्तिबोध की कविता 'मुझे कदम-कदम पर' में सामान्य जन की विवशता पर भी गहरा व्यंग्य किया है- "अजीब जिंदगी है /बेवकूफ बनने के खातिर ही, / सब तरफ अपने को लिए-लिए फिरता हूँ / और यह देख बड़ा मजा आता है / कि मैं ठगा जाता हूँ।"[4]

इसी यथार्थ का चित्रण व समाज की पीड़ा को महसूस करके उसे चत्रित करना उन्हें जन कवि बनाता है। सामान्य जन का पक्ष लेती उनकी कविताएं सामान्य होते हुए भी विशेष होती है। 'अँधेरे में' कविता में मुक्तिबोध 'अरुण कमल' का प्रयोग विवेक और क्रांति के रूप में करते हैं। जिसके माध्यम से मुक्तिबोध समाज के शोषित वर्ग को उस कठिन से कठिन परिस्थितियों को पार करने के बाद एक नये समाज जो कि सबके लिए समानता और सहृदयता का भाव रखता है। उस समाज तक पहुंचने की ओर संकेत करता है और इस में सबसे अहम रूप से वह बुद्धिजीवी को अपने आंतरिक संघर्ष को छोड़ नेतृत्व के लिए प्रेरित करता है- "अब अभिव्यक्ति के सारे खतरे /उठाने ही होंगे तोड़ने होंगे मठ और गढ़ सब / पहुंचना होगा दुर्गम पहाड़ों के उस पार / तब कहीं देखने को मिलेगी बाँहें / जिसमें प्रतिपल कांपता रहता /अरुण कमल एक।"[5]

पौराणिक प्रतीकों को मुक्तिबोध ने आधुनिक सन्दर्भों से जोड़कर नए अर्थ में प्रयुक्त किया है। 'लकड़ी का रावण' पूंजीवादी व्यवस्था और शोषण की सत्ता का प्रतीक है। इसके साथ ही वह जन विरोधी सत्ता का भी प्रतीक है। वानर जनवादी क्रांति के प्रतीक हैं। जैसे- "बढ़ न जायँ, छा न जायँ / मेरी इस अद्वितीय / सत्ता के शिखरों पर स्वर्णाभ, / हमला न कर बैठें खतरनाक / कुहरे के जनतंत्री / वानर थे नर ये।"[6]

यहां जब शिखर पर बैठे रावण के अंतर्मन में भी यही दिखाया गया है जो सत्ता भोग रहे सत्ताधारियों को है, कि समाज अगर उसके खिलाफ आंदोलन कर देता है तो उसकी सत्ता को खतरा पैदा हो सकता है । इसीलिए आंतरिक डर से वह भी पीड़ित है और समय की स्थिति उसे और भी भयभीत कर रही है ।

उनकी 'ब्रह्मराक्षस' कविता में ब्रह्मराक्षस एक विचारशील, आक्रोशमय, बुद्धिजीवी है । 'ब्रह्मराक्षस' अपेक्षित ज्ञान, विवेक और बौद्धिक चेतना का प्रतीक है । मुक्तिबोध इसी अपेक्षित ज्ञान, विवेक और बौद्धिक चेतना का सम्बन्ध समाज से जोड़ते हुए दिखाते हैं कि किस प्रकार मानव बाहय और आंतरिक संघर्षों में पिस रहा है । उन्होंने लिखा है – "बावड़ी में वह स्वयं / पागल प्रतीकों में कह रहा है / वह कोठरी में किस तरह / अपना गणित करता रहा /ओ मर गया .....।"[7]

"पिस गया वह भीतरी / ओ बाहरी दो कठिन पाटों के बीच / ऐसी ट्रेजडी है नीच ।"[8]

मुक्तिबोध कथ्य के आत्मसंघर्ष के समानांतर ही अभिव्यक्ति संघर्ष से भी जूझते रहे हैं । अपनी सामाजिक चेतना और अन्तःबाह्य के संघर्ष को प्रामाणिक और ईमानदार बनाकर प्रस्तुत करने की कला उनकी कविताओं की अभिव्यक्ति भी परम्परा को तोड़ने वाली, लीक से हटकर चलनेवाली लेखनी को प्रमाणित करती है । अभिव्यक्ति के समस्त खतरों को उठाकर उन्होंने पारम्परिक काव्य-शैली के मठों और दुर्गों को तोडकर अपने अरुण कमल वाले उद्देश्य को काव्य के स्तर पर ही सफलता से प्राप्त किया है । मुक्तिबोध का काव्य बहु-आयामी व सजीव काव्य है, जिसमें समसामयिकता, जनमानसिकता की पहचान, विश्वदृष्टि, आधुनिकता, वैज्ञानिकता तर्कशीलता है । स्वप्न कथा शैली कवि मुक्तिबोध की निजी उपलब्धि है । 'स्वप्न-कथा-शैली' के माध्यम से मुक्तिबोध ने द्वंद्वात्मक समाज तथा व्यक्ति-मन के द्वन्द्व की प्रत्येक तह को परत-दर-परत को खोल दिया है ।

दरअसल, मुक्तिबोध के काव्य की अंतर्वस्तु जितनी व्यापक है, उससे भी ज्यादा गहरी है । अपनी रचनाओं के माध्यम से वे समाज, जीवन और युग के जिस यथार्थ का साक्षात्कार करते हैं और जिसे अभिव्यक्त करते हैं, वह वस्तुतः जटिल और इतना उलझा हुआ और षड्यंत्रकारियों से भरा हुआ है कि उसे सीधे-सीधे पकड़ पाना या समझ पाना मुश्किल हो जाता है ।

मुक्तिबोध ऐसे मुद्दों को छूते हैं, जिसे पढ़ते हुए हम शर्मिंदा होते हैं । हम में आत्मालोचन के साहस की कमी आई है । मुक्तिबोध अपने वर्ग के प्रति निर्मम थे । वे आत्मालोचन को कसौटी की तरह इस्तेमाल करते थे । उनकी वैचारिकी में सामाजिक और राजनीतिक श्रेणियों के मध्य दरार नहीं थी । यह दरार बाद में आई है । इसे पाटने की जरूरत है । मुक्तिबोध ने अपने समय से जूझते हुए अपने लिए सम्पूर्ण वैचारिकी बनाई थी। अपने लिए विचार आयात किया था।

भक्त कवियों के बारे में जैसे आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा था कि 'उनकी कविता उनके दार्शनिक चिंतन का सह-उत्पाद है ।' उसी तरह कहा जा सकता है कि मुक्तिबोध का रचनाकर्म उनकी वैचारिकी का हिस्सा है । मुक्तिबोध मध्यवर्ग के प्रति रचना का रवैया ठीक करना चाहते थे ।

दरअसल, मुक्तिबोध के काव्य की अंतर्वस्तु जितनी व्यापक है, उससे भी ज्यादा गहरी है । अपनी रचनाओं के माध्यम से वे समाज, जीवन और युग के जिस यथार्थ का साक्षात्कार करते हैं और जिसे अभिव्यक्त करते हैं, वह वस्तुतः जटिल और इतना उलझा हुआ और षड्यंत्रकारियों से पटा हुआ है कि उसे सीधे-सीधे पकड़ पाना या अभिव्यक्त कर पाना मुक्तिबोध के लिए स्वभावतः ही संभव नहीं था। उनकी अन्तर्वस्तु में राजनीति की उलझी हुई, पेंचदार बाजियों, नेताओं के भ्रष्टाचार और इसकी जड़ें समाज में रह रहे मध्यवर्गीय, बुद्धिजीवी व्यक्ति के मन के बाह्य और भीतरी संघर्ष, निरन्तर विघटित होते मूल्यों के बीच में जिंदा रहने की छटपटाहट में फंसे हुए जन तथा इसके साथ ही साहित्य से जुड़े हुए तमाम सवाल भी हैं। मुक्तिबोध जनता के सजग, संघर्षधर्मी और वर्गचेतस लेखक हैं ।

मुक्तिबोध की कविताओं में 'ओरांग-उटांग' उन पाश्विक वृतियों का प्रतीक बनकर आया है, मनुष्य जिनका प्रयोग सामाजिक और नैतिक बंधनो के कारण परोक्ष रूप से करता है । मुक्तिबोध की कविताएँ यथार्थ की वस्तुपरकता पर मानव जीवन के ठोस आधार पर खड़ी है । जैसे – "स्वपन के भीतर एक स्वपन, / विचारधारा के भीतर और / एक अन्य / सघन विचारधारा प्रछन्न!! / कथ्य के भीतर एक अनुरोध / विरुद्ध –विपरीत / नेपथ्य - संगीत !! / मस्तिष्क के भीतर एक मस्तिष्क / उसके भी अंदर एक और कक्ष /कक्ष के भीतर / एक गुप्त प्रकोष्ठ और कोठे के साँवले गुहांधकार में / मजबूत संदूक / दृढ़ भारी-भरकम / और उस संदूक भीतर कोई बंद है ।"[9]

मुक्तिबोध की लम्बी कविता 'मेरे सहचर मित्र' में काव्यनायक अपने ऐतिहासिक, सामाजिक दायित्व का बोध हो जाने के कारण, वह जनता को संगठित करने के लिए सक्रिय हो जाता है इस काम को 'फ़्यूजबल्ब' के स्थान पर 'प्राणबल्ब'' लगाने के द्वारा स्पष्ट किया है । जैसे: "मई स्याह चंद्र का फ्यूज बल्ब / जल्दी निकाल / पवन प्रकाश का प्राण –बल्ब /वह लगा सकूँ / जो बल्ब तुम्ही ने श्रमपूर्वक तैयार किया / विक्षुब्ध जिंदगी की अपनी / वैज्ञानिक प्रयोगशाला में ।"[10]

अमानवीयकरण तथा शोषण के विरुद्ध मानवतावाद के पक्षधर कवि के लिए उज्जवल भविष्य का सपना देखना आवश्यक हो जाता है । मुक्तिबोध को यह विश्वास है कि शोषण पर आधारित यह समाज चल नहीं सकता 'एक अंतर्कथा ' कविता में यह स्वप्न स्पष्ट रूप से दिखाई देता है । नए निर्माण के हित में माँ जिंदगी के कचरे में भी ज्ञानात्मक

संवेदनाओं को एक अच्छे उद्देश्य को सामने रखती हुई खोजती है । माँ कहती है की वो उन अनुभव मर्मों को एकत्रित कर रही है, जिन्हें सभ्यतावश छोड़ा जा रहा है । उनकी मूल्यवत्ता का ज्ञान वह समाज को कराएगी । युग-युग के अनुभवों का नेतृत्व करने वाली माँ कहती है –"घर के बाहर आँगन में मैं सुलगाऊँगी, / दुनियाभर को उनका प्रकाश दिखलाऊँगी ।"[11]

मुक्तिबोध समाज की वस्तु-स्थिति के चित्रण के द्वारा कवि जीवन, यथार्थ को सम्प्रेषित करता है। 'अँधेरे में' कविता में काव्यनायक अपने कमरे में लेटा है, उसे किसी असंभाविक घटना का संदेह होने लगता है । वह उस जुलूस में चलने वालो को देखकर बेचैन होने लगता है । वह अलग-अलग कार्यक्षेत्रों में होने वाले व्यक्तियों को एकसाथ देखकर समझ जाता है कि, यह जुलुस उन षडियंत्रकारियों का है जो सफेदपोश है और इसी की आड़ में उनकी पाश्विक प्रवृतियाँ अपना शिकार करती है। जैसे- "भई वाह! / उनमें कई प्रकांड आलोचक, विचारक, जगमगाते कविगण / मंत्री भी, उद्योगपति और विदवान / यहां तक कि शहर का हत्यारा कुख्यात / डोमाजी उस्ताद / बनता है बलवन / हाय, हाय !! / भीतर का राक्षसी-स्वार्थ अब / साफ़ उभर आया / छपे हुए उदेश्य / यहां निखर आयें हैं, / यह सोभा यात्रा है किसी मृत्यु-दल की ।"[12]

मुक्तिबोध की कविताएं सामाजिक यथार्थ को हमारे सामने प्रमुखता से रखती हैं । मनुष्य की तबाह होती जिंदगी, और उसमे सक्रिय ताकतों को बड़े ही प्रभावपूर्ण ढंग से उद्घाटित करती हैं । उनकी कविताएं मनुष्य और समाज को पूरी तरह अपने में शामिल करते हुए शत्रुओं की पहचान करती हैं । मुक्तिबोध की कविताओं का यथार्थ सिर्फ स्वप्न-कथा का यथार्थ न होकर मानव-जीवन और मानव-समाज का यथार्थ है । उनकी कविताओं में प्रयुक्त फैंटेसी शैली यथार्थ के गहनतम सत्यों को उद्घाटित कर पाठक की समाज चेतना विकसित करने में सहायक बनी हैं । अतः मुक्तिबोध जन-चेतना के कवि हैं । जो समाज के उलझाव भरी जीवन पद्धति को व्यक्त करने के लिए काव्य का सफलता से प्रयोग करते हैं ।

'जब प्रश्न-चिह्न बौखला उठे' कविता में भी प्रकाश के प्रतीक दिखाई देते हैं जिसमे जन-जन के घर में जन-संघर्षों की राहों पर, चलते हुए लोगों को जनसंघर्षों में जीवन के सत्य-दीप दिखाई देते हैं । वे कहते है- "सूरज का लाल-लाल चेहरा / डोला धरती की बाँहों में / आसक्तिभरा रवि का मुख वह / उसकी मेधा की ज्वालाएँ ऐसी फैली / उस घासभरे जंगल-पहाड़-बंजर में / यों दावाग्नि लगी / मानो बूढी दुनिया के सर पर आग लगी ।"[13]

कवि मुक्तिबोध को क्रांतिकारी लाल-विचार ज्ञानात्मक संवेदन से मिले हैं । मुक्तिबोध की कविता 'ब्रह्मराक्षस' में ब्रह्मराक्षस एक विचारशील, आक्रोशमय बुद्धिजीवी हैं जो कि व्यवस्था को अपना भी नहीं सकता और समाज को कुछ दिए बिना उसकी मुक्ति भी नहीं है । इसी में उसके उपेक्षित ज्ञान और बौद्धिक चेतना का द्वंद्व हैं । जैसे- "बावड़ी में वह स्वयं / पागल प्रतीकों में निरंतर कह रहा हैं/ वह कोठरी में किस तरह अपना गणित करता रहा / और मर गया .....।"[14]

मुक्तिबोध ने 'एक स्वप्न कथा' कविता में उत्पादन करने वाले समाज की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति न होने व उनके शोषण के माध्यम से पूंजीपति वर्ग पर उनका निर्भर होना है । कविता में शोषणजीवी व्यवस्था और उसके राजतन्त्र को प्रतीकों के माध्यम से दिखया है । जैसे –"हो न हो / इस काले सागर का / सुदूर स्थित पश्चिम-किनारे से / जरूर कुछ नाता है / इसीलिए, हमारे पास सुख नहीं आता है ।"[15]

मुक्तिबोध ने काव्य में समाज में आज भी व्याप्त बलिदान की परम्परा को ऐतिहासिक घटना से जोड़कर दिखाया है कि आज भी मालिकों के लिए अपने पुत्रों का बलिदान न जाने कितनी पन्ना दाइयों ने समाज में किया है । सिर्फ बलिदान के रूप में बदलाव हुआ है, परम्परा ज्यों कि त्यों कायम है । जैसे माँ का मजदूर बेटा अपने रक्त से मिल मालिक के बेटे की दुनिया आबाद करता ही है । जैसे –"अंबर के पलने से उतार रवि-राजपुत्र / ढाँककर सावले कपड़ों में / रख दशा-टोकरी में उसको / रजनी-रूपी पन्ना दाई / अपने से जन्म पुत्र-चंद्र फिर सुला गगन के पलने में / चुपचाप टोकरी सर पर रख / रवि-रजपुत्र ले खिसक गयी / पुर के बाहर पन्ना दाई / यह रात- मात्र उसकी छाया / घबराहट जो कि हवा में है / इसलिए कि अब शशि को हत्या का क्षण आया ।"[16]

मुक्तिबोध की कविता में सूखे कठोर नंगे पहाड़ युगों-युगों से चली आ रही शोषण-व्यवस्था का प्रतीक है । जिसमे लाभ-लोभ, मोह और आतंक का प्रभाव दिखाकर भोले भाले जनों का शोषण करते दिखाई देता है । वे कहते हैं कि –"ये अहं-गर्भ यान -प्राण,शोषण प्रसन्न / युग-युग की सचित 'संस्कृति' के ये सड़े रूप / है खड़े हए उद्धत अखंड / उद्दण्ड विजद खल्वाट-शीर्ष / रख आसमान में दर्पपूर्ण, / काले पत्थर का तन धृष्टतापूर्ण दुष्ट सीना कठोर / हैं रहे रोक आतुर वर्षा लेकर आती व्याकुल समीर / इनसे टकरा आहत होकर वापिस जाती ठंडी बयार / कर गिरफ्तार ये शिला-वक्ष शैतान घोर! / सूखे पहाड़ नंगे कठोर ।"[17]

निष्कर्षत: मुक्तिबोध की कविताओं में उनका वर्ग संघर्ष है । यही संघर्ष उन्हें 'जनकवि' बनाता है । अपनी कविताओं के माध्यम से वे पूंजीवादी समाज का विरोध करते हैं । इसी कारण उनकी कविताओं में समाज संघर्ष करता चित्रित होता है । मुक्तिबोध शोषित समाज का पक्ष लेते हैं । उन्होंने भारतीय समाज के संस्कारों, मान्यताओं,

कमजोरियों, विकृतियों, को उनकी भाषा में रचा है। मुक्तिबोध के द्वारा रचनाओं के माध्यम से समाज के दुःख, दर्द को उजागर किया है इसी लिए अनेक विद्वानों ने उनकी कविता को 'खण्डित रामायण' कहा है।

मुक्तिबोध की कविताएं जातिगत पिछड़ों का चित्रण करती हैं। बंगाल के अकाल में भूख से पीड़ित मानव उनके काव्य में अपना दुःख प्रकट करता है। मुक्तिबोध को किसान, मजदूर, परिश्रमी मानव प्रिय हैं। मानव की दरिद्रता समाप्त हो उसे अपना प्रियप्राप्त मिलेगा यह विश्वास मुक्तिबोध के काव्य में उमड़ रहा है। मुक्तिबोध के काव्य के केंद्र में 'मानव' है और उसका सामाजिक एवं राजनीतिक द्वंद्व है।

संदर्भ

1. नवल, नंदकिशोर; मुक्तिबोध; साहित्य अकादमी, रवींद्र भवन, 35 नई दिल्ली; संस्करण:2007; पृष्ठ संख्या-2.
2. मुक्तिबोध, गजानन माधव; चाँद का मुँह टेढ़ा है; भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, अंसारी रोड़, दरियागंज; नयी दिल्ली; संस्करण: 2001; पृष्ठ संख्या-39.
3. वही; पृष्ठ संख्या-63.
4. वाजपेयी, अशोक; गजानन माधव मुक्तिबोध प्रतिनिधि कविताएँ; राजकमल प्रकाशन, पेपरबैक्स, 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली; संस्करण: 2021; पृष्ठ संख्या-77-78.
5. जैन, नेमिचन्द्र; मुक्तिबोध रचनावली खंड-2; राजकमल प्रकाशन, 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली; संस्करण: 2011; पृष्ठ संख्या-370.
6. मुक्तिबोध, गजानन माधव; चाँद का मुँह टेढ़ा है; पूर्वोक्त; पृष्ठ संख्या-289.
7. वाजपेयी, अशोक; गजानन माधव मुक्तिबोध प्रतिनिधि कविताएँ; पूर्वोक्त; पृष्ठ संख्या-125.
8. मुक्तिबोध, गजानन माधव; एक साहित्य की डायरी; भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, अंसारी रोड़, दरियागंज; नयी दिल्ली; संस्करण: 1964; पृष्ठ संख्या-21.
9. जैन, नेमिचन्द्र; मुक्तिबोध रचनावली खंड-2; पूर्वोक्त; पृष्ठ संख्या-249.
10. वही; पृष्ठ संख्या : 249.
11. वाजपेयी, अशोक; गजानन माधव मुक्तिबोध प्रतिनिधि कविताएँ; पूर्वोक्त; पृष्ठ संख्या-61.
12. वही; पृष्ठ संख्या-137-138
13. जैन, नेमिचन्द्र; मुक्तिबोध रचनावली खंड- 2; पूर्वोक्त; पृष्ठ संख्या-329.

14. वाजपेयी, अशोक; मुक्तिबोध प्रतिनिधि कविताएं; पूर्वोक्त; पृष्ठ संख्या-125.

15. जैन, नेमिचन्द्र;मुक्तिबोध रचनावली खंड-2; पूर्वोक्त; पृष्ठ संख्या -269

16. मुक्तिबोध; चाँद का मुँह टेढ़ा है; भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, पूर्वोक्त; पृष्ठ संख्या-73.

17. मुक्तिबोध; भूरी-भूरी खाक धूल: राजकमल प्रकाशन, 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली; संस्करण द्वितीय; पृष्ठ संख्या-218-219.